

II-23. Move for Shatkhandagam

Without publicity there is no prosperity.

- Zel'dovich principle

During 1934-38 Kakka kept working on Jeevatthan from the copies of copies available in Ajmer, Jhalrapatan, and Saharanpur. By the time I was born in 1938, in Ujjain he had completed work on Satprarupana (I-20) as well as the next three chapters with detailed notes for two more. Six weeks after my birth, our family moved to Amraoti in December 1938. This was at the insistence of many of the Kakka's friends who saw that the work of the Uddharak Fund was stalled. Kakka was aware of the potential problems associated with the move. He was also aware that ambitions of Professor did not match his abilities. At the same time Kakka felt sure that he could come back to Ujjain if he wished so. He saw the move as *an opportunity to materialize his dreams*. He felt confident. After all, he had nearly finished the work on several volumes. Within months after arrival in Amraoti he purchased a house. It is the only house in which he ever tried to settle away from his ancestral home in Sadumar. Apparently, he thought that his nomadic days of free-lance work are to be over soon.

On Kakka's part there was eagerness to see his work in print. He started work on January 1, 1939. After comparing his draft with the copy in Amraoti, within eight weeks his hand-written pandulipi was sent to press for typesetting. In February 1939 Phool Chandr Jain, whom I will call Panditji, also joined in the effort.

Publication of Satprarupana as the first volume of Shatkhandagam in 410 pages was celebrated as a major event on November 7, 1939. As is apparent from the front pages of the first printed edition (Figures II-4 B and C), seeds of discord were already sown. Also as is apparent from Figure II-4 D to F the problem worsened in the second edition. Kakka resigned on the day of celebration as soon as he saw the cover of the printed version. On the dustcover the Professor is Editor. On the inside cover page in Hindi, Professor is Editor with Panditji and Kakka as the Sah-Sampadak (coeditor). On the inside English cover Professor takes credit for translation, introduction and editing "assisted by" Panditji and Kakka. On the other hand, the preface (Figure II-4A) gave credit to Kakka for his work in Ujjain. Kakka's name in English was also spelled wrong as 'Hira,' rather "Heera" that he preferred based on the correct pronunciation. Needless to say Kakka had not seen the complete printed and bound book before the inauguration ceremony, although he had proof read the galley and page proofs. It violated the initial (before the move) understanding that Professor is a managing editor. Before the publication date an agreement was reached to include all the three as the co-editors with equal credit in all the volumes. Clearly, the agreement was not honored.

अतएव एक सहायक स्थायी रूपसे रख लेनेकी आवश्यकता प्रतीत हुई। सन १९३५ में विनानिवासी पं. वंशीधरजी व्याकरणाचार्यको मैंने बुला लिया, किन्तु लगभग एक माह कार्य करनेके पश्चात् ही कुछ गार्हस्थ्यिक आवश्यकताके कारण उन्हें कार्य छोड़कर चले जाना पड़ा। तत्पश्चात् साठूमल (झांसी) के निवासी पं. हीरालालजी शास्त्री न्यायतीर्थको बुलानेकी बात हुई। वे प्रथम तीन वर्षे उज्जैनमें रायबहादुर सेठ लालचन्द्रजीके यहां रहते हुए ही कार्य करते रहे। किन्तु गत जनवरीसे वे यहां बुला लिये गये और तबसे वे इस कार्यमें मेरी सहायता कर रहे हैं। उसी समयसे बिना निवासी पं. फूलचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्रीकी भी निगुक्ति करली गई है और वे भी अब इसी कार्यमें मेरे साथ तत्परतासे संलग्न हैं। तथा व्यक्तिगत रूपसे यथावसर अन्य विद्वानोंका भी परामर्श लेते रहे हैं।

प्राकृतपाठ संशोधनसम्बंधी नियम हमने प्रेस कापीके दो सौ पृष्ठ राजाराम कालेज कोल्हापुरके अर्धमागधीके प्रोफेसर, हमारे सहयोगी व अनेक प्राकृत ग्रंथोंका अत्यन्त कुशलतासे सम्पादन करनेवाले डाक्टर ए. ए. उपाध्येके साथ पढ़कर निश्चित किये। तथा अनुवादके संशोधनमें जैनधर्मके प्रकाण्ड विद्वान सि. शा. पं. देवकीनन्दनजीका भी समय समय पर साहाय्य लिया गया। इन दोनों सहयोगियोंकी इस निर्व्याज सहायताका मुझ पर बड़ा अनुग्रह है। शेष समस्त सम्पादन, प्रूफ शोधनादि कार्य मेरे स्थायी सहयोगी पं. हीरालालजी शास्त्री व पं. फूलचन्द्रजी शास्त्रीके निरन्तर साहाय्यसे हुआ है, जिसके लिये मैं उन सबका बहुत कृतज्ञ हूँ। यदि इस कृतिमें कुछ अछाई व सौन्दर्य हो तो वह सब इसी सहयोगका ही सुफल है।

Figure II-4A. Excerpt from the preface of the 1939 Edition of Satprarupana (see Figures 4B and C) signed (November 1, 1939) by Professor Hiralal Jain.

श्री भगवत्-पुष्पदन्त-भूतबलि-प्रणीतः

षट्खंडागमः

श्रीवीरसेनाचार्य-विरचित-धवला-टीका-समन्वितः ।

तस्य

प्रथम-खंडे जीवस्थाने

हिन्दीभाषानुवाद-तुलनात्मकटिप्पण-प्रस्तावनानेकपरिशिष्टैः संपादिता

सत्प्ररूपणा १



सम्पादकः

अमरावतीस्थ-किंग-एडवर्ड-कालेज-संस्कृताध्यापकः एम्. ए., एल्. एल्. बी., इत्युपाधिधारी

हीरालालो जैनः

सहसम्पादकौ

पं. फूलचन्द्रः सिद्धान्तशास्त्री * पं. हीरालालः सिद्धान्तशास्त्री, न्यायतीर्थः

संशोधने सहायकौ

व्या. वा., सा. सू., पं. देवकीनन्दनः * डा. नेमिनाथ-तनय-आदिनाथः
सिद्धान्तशास्त्री उपाध्ययः एम्. ए., डी. लिट्.

प्रकाशकः

श्रीमन्त सेठ लक्ष्मीचन्द्र शिताबराय

जैन-साहित्योद्धारक-फंड-कार्यालयः

अमरावती (बरार)

वि. सं. १९९६]

वीर-निर्वाण-संवत् २४६५

ई. स. १९३९

मूल्यं रूप्यक-दशकम्

Figure II-4B. The Hindi inside-cover page of the first edition of Satprarupana part of Shatkhandagam published in 1939.

THE
ṢAṬKHAṆḌĀGAMA

OF

PUṢPADANTA AND BHŪTABALĪ

WITH

THE COMMENTARY DHAVALĀ OF VIRASENA

VOL. I

SATPRARŪPAṆĀ

Edited

with introduction, translation, notes, and indexes

BY

HIRALAL JAIN, M. A., LL. B.,

C. P. Educational Service, King Edward College, Amraoti.

ASSISTED BY

Pandit Phoolchandra
Siddhānta Shāstri.

*

Pandit Hiralal Siddhānta Shāstri
Nyāyatīrtha.

With the cooperation of

Pandit Devakinandan
Siddhānta Shāstri

*

Dr. A. N. Upadhye,
M. A., D. Litt.

Published by

Shrimant Seth Laxmichandra Shitabrai,

Jain Sāhitya Uddhāraka Fund Karyalaya.

AMRAOTI (Berar).

1939

Price rupees ten only.

Figure II-4C. The inside-cover page in English of the first edition of Satprarupana part of Shatkhandagam published in 1939. The dust-jacket contains only the name of the Professor as the Editor.

श्रीमंत सेठ सिताबराय लक्ष्मीचन्द्र जैन साहित्योद्धारक सिद्धान्त ग्रंथमाला - १.

श्री भगवत् - पुष्पदन्त - भूतवालि - प्रणीत :

षट्खण्डागमः

श्री वीरसेनाचार्य - विरचित धवला - टीका समन्वितः

तस्य

प्रथम-खण्डे जीवस्थाने

हन्दीभाषानुवाद - तुलनात्मक टिप्पण प्रस्तावना अनेक - परिशिष्टः संपादिता

सत्प्ररूपणा - १

संपादक

स्व. डॉ. हीरालाल जैन

एम. ए., एल. एल. बी., डी. लिट.

भूतपूर्व प्राध्यापक व अध्यक्ष संस्कृत - पालि - प्राकृत विभाग,
नागपुर विश्वविद्यालय व जबलपुर विश्वविद्यालय
तथा डायरेक्टर प्राकृत - जैन शोधसंस्थान, वैशाली,
बिहार शासन शिक्षा विभाग.



सहसंपादक

डॉ. आ. ने. उपाध्ये

एम. ए., डी. लिट.

प्राध्यापक व अध्यक्ष,
स्नातकोत्तर अध्ययन व शोध विभाग, मंगूर विश्वविद्यालय
भूतपूर्व प्राध्यापक अर्द्धमागधी, राजाराम कालेज,
महाराष्ट्र शासन शिक्षा विभाग.



प्रकाशक

जैन संस्कृति संरक्षक संघ

संतोष भुवन, फलटण गल्ली, सोलापूर-२.

(महाराष्ट्र)

वि. सं. २०२९

वीर निर्वाण संवत् २४९९

ई. सन १९७३

मूल्य १६-००

Figure II-4D. The Inside cover page in Hindi from the 1973 reprint of Volume I. Note that names of earlier coeditors (Figure II-4B) are removed and A. N. Upadhye is included as "sahasampadak."

Shreemant Seth Sitab Rai Laxmichandra Jain
Sahityodharak Sidhant Granthamala

Shree Bhagawat Pushpadant Bhutabali Pranit

SHATKHANDAGAM

Shree Veersenacharya Virachit Dhavala Teeka Samanwita

FIRST VOLUME

JEEVASTHAN

Hindi Bhashanuwad

Tulanatmak Tippetan Prastavana Anek Parishisht Sampadita

SAT-PRARUPANA

Sampadak

Late Dr. Hiralal Jain

M. A., LL. B., D. Litt.

Bhutapurva Pradhyapak and Adhyaksha -
Sanskrit - Prakrit Vibhag - Nagpur Vishwa Vidyalaya,
Director - Prakrit Jain Shodha Samsthan, Vaishali,
Bihar Shasan Shiksha Vibhag.



Saha - Sampadak

Dr. A. N. Upadhye

M. A., D. Litt.

Pradhyapak and Adhyaksha
Snatakottar Adhyayan and Shodha Vibhag - Mysore Vishwa Vidyalaya.
Bhutapurva Pradhyapak Ardha Magadhi - Rajaram College
Maharashtra Shasan Shiksha Vibhag.



Prakashak

Jain Sanskriti Samrakshak Sangha

Santosh Bhavan, Phaltan Galli, Sholapur - 2.
(Maharashtra)

Vikram S. 2029

Veer Samvat 2499

A. D. 1973

Price : Rs. 16 - 00

Figure II-4E. The Inside cover page in English from the 1973 reprint of Volume I. Note that the names of earlier coeditors (Figure II-4C) are removed and A. N. Upadhye is included as "saha-sampadak" (coeditor).

श्री० पन्नालाल दि० जैन सारस्वता भवन

सैठजी की नकियाँ, आगरा (राजस्थान)

दि० ८-२-७४

श्रीमान् सैठ बालचंद्रजी देवचंदजी गहा,

मंत्री- जोधराज जैन ग्रन्थालय, सीलापुर ।

सविनय जय जिनैन्दु,

मुझे ज्ञात हुआ है कि आपका उक्त ग्रन्थालय से हाल में श्री प्रकाशित
अष्टांगम को प्रथम पुस्तक के द्वितीय संस्करण में 'सह-सम्पादक' के रूप में मेरा
नाम पं० फूलचन्द्रजी सिद्धान्ताश्रमजी नाम रखा दिया गया है और डा० ए० एन०
उपाध्ये का नाम 'सह-सम्पादक' के रूप में दिया गया है । यह बात बहुत आपत्ति
के योग्य है, क्योंकि वह यथार्थ से सर्वथा विपरीत है । उक्त पुस्तक के प्रथम संस्करण
में दिये गये नामों एवं सम्पादकाय-प्रकाशकाय वक्तव्यों से ज्ञाप उक्त बात की यथाधिता
पता चालि जान सकते हैं । ज्ञाप जैसे सुविज्ञ मंत्री है एतत्तु हुर ऐसा क्यों हुआ, यह बात
अति आश्चर्य एवं वेद-जनक है ? ? ?

इस सम्बन्ध में मेरा आपसे निवेदन है कि ज्ञाप तत्काल ही उक्त पुस्तक के
दूसरे संस्करण में प्रथम संस्करण के समान सम्पादक-मंडल के नामों को सुदृष्ट कराकर
जीई और इस सम्बन्ध में जो नवीन संगीत किये गये हैं, उन्हें रद्द करें । साथ ही
जब तक पूर्ववत् उक्त संगीत न गयी जाय, तब तक उसकी विक्री, भेंट और प्रचार
आदि बन्द रहना चाये ।

जाना है कि आप तत्काल समुचित कार्रवाही कर हमारे और पं० फूलचन्द्र
जी के साथ हुर इस अन्वय का परिधान करेंगे । यदि ऐसा नहीं किया गया, तो
मुझे विवश होकर समाचार-पत्रों द्वारा समाज के सामने इस अन्वय को रखना होगा,
और ऐसी हालत में डा० उपाध्ये ती बदनाम होंगे जो, साथ में ऐसे कई गड़े मुर्दे भी
उतड़ कर सामने आँगे, कि जिनसे स्व० डा० शारदाश्रमजी तक भी लांछित हुर
बिना नहीं रहेंगे । मैं नहीं चाहता कि जिनको 'सन्मति' द्वारा अभी हाल में ही
ब्रह्मचर्या समर्पण का गई है, उनके यज्ञ में किया प्रकार का घबरा लगे ।

जाना ही नहीं, मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप उक्त स्थिति को तत्काल
समाप्त और हम दोनों के हृदयों में उत्पन्न हुई अज्ञान्ति की शान्त करने का प्रयत्न
करेंगे ।

आपका विश्व

श्री० पन्नालाल दि०

(श्रीरालाल नकियाँ)

Figure 4F. The letter of protest from Kakka to the publisher for the misrepresented credits in the 1973 reprint of Satprarupana (as in Figures 4D and E).

Few weeks after the celebration in 1939, at the insistence of his friends and relatives, Kakka took back the resignation. Professor had promised that the problem and discrepancies about the editorial credits would be resolved in the future volumes. The publication schedule progressed rapidly. The second volume was published within a year. A total of five volumes had appeared by 1943 with Kakka still as Sah-sampadak (coeditor) on the Hindi cover and under the "assisted by" on the English cover. Seeing that the problem of the credits is not going to be resolved Kakka decided to leave Amraoti. He left in 1943 with the draft pandulipi of the sixth volume completed. In the middle of the economic turmoil of the Second World War Kakka sold his Amraoti house at a loss and returned to Ujjain.

Apparent equanimity of Panditji in the whole episode is betrayed by the fact that he had already left in 1942. At the encouragement of Kakka, Bal Chand Jain had joined in the effort by the end of 1942. They were personal friends and both were born in neighboring villages 4 miles apart. Bal Chand took over the responsibilities for the work after 1944. By 1958 the entire Shatkhandagam legacy of Dharsen, Pushpdant and Bhutbali with The Dhavla interpretation by Virsen and Jinsen was in print in sixteen volumes.

As also summarized in Table II-5, all the other Dhavla were also translated and published between 1955 and 1975. Panditji with Kailash Chandra Jain and Mahendra Kumar Jain completed Jai Dhavla that was initiated by Kakka in 1946. After 14 years of work Kakka published the Parikarm Prabhat Tika. Several reprints and abridged versions of these works have appeared over the years without the acknowledgement of the original effort. It is affront to the intellectual creative process.

Contents of Volume II

People and Places

Preface to Volume II

- II-1. Perception for Shared Knowledge
- II-2. People and Places
- II-3. Live, Let Live, and Thrive
- II-4. Millennium of Mahaveer and Buddha
- II-5. Socio-political Context
- II-6. Clash of World-Views
- II-7. On the Ashes of the Magadh Empire
- II-8. Tradition of Austere Monks
- II-9. Who Was Bhadrabahu I?
- II-10. Prakrit: The Languages of People
- II-11. Itthi: Sensory and Psychological Perception
- II-12. What Is Behind the Numbers?
- II-13. Rational Consistency
- II-14. Looking through the Parts
- II-15. Active Interaction
- II-16. Anugam to Agam
- II-17. Preservation of Legacy
- II-18. Legacy of Dharsen
- II-19. The Moodbidri Pandulipis
- II-20. Content of Moodbidri Pandulipis
- II-21. Kakka Takes the Challenge
- II-22. About Kakka
- II-23. Move for Shatkhandagam
- II-24. Basis of the Discord in the Teamwork
- II-25. Significance of the Dhavla
- II-26. Jeev Samas Gatha
- II-27. Uses of the Words from the Past
- II-28. Biographical Sketches